आज़ादी का अमृत महोत्सव

झारखंड में विद्रोह का इतिहास

(सन् 1767-1947)

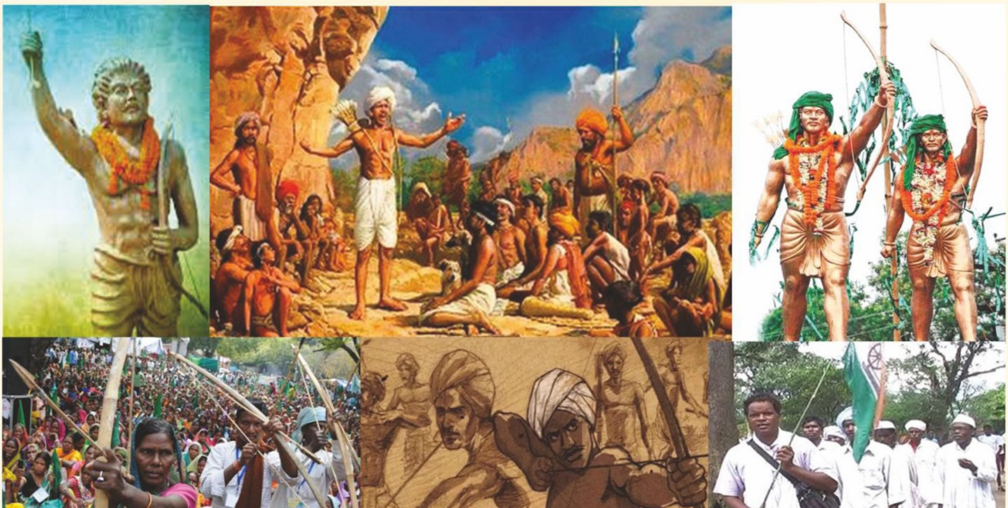

शैलेन्द्र महतो

आजादी का अमृत महोत्सव के वर्षगाँठ पर

झारखंड में विद्रोह का इतिहास

(सन् 1767-1947)

शैलेन्द्र महतो

अनुज्ञा

अनुज्ञा

वैधानिक चेतावनी
पुस्तक के किसी भी अंश के प्रकाशन, फोटोकॉपी, इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में उपयोग के लिए लेखक व प्रकाशक की लिखित अनुमति आवश्यक है। पुस्तक में प्रकाशित आलेख/आलेखों के सर्वाधिकार मूल रचनाकार/रचनाकारों के पास सुरक्षित हैं। पुस्तक में व्यक्त विचार पूर्णतया लेखक/लेखकों अथवा संपादक/संपादकों के हैं। यह जरूरी नहीं है कि प्रकाशक इन विचारों से पूर्ण या आंशिक रूप से सहमति रखे। किसी भी विवाद के लिए न्यायालय, दिल्ली ही मान्य होगा।

© लेखक

प्रथम संस्करण : 2021

द्वितीय संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण : 2023
संशोधित संस्करण : 2025

ISBN 978-93-95380-66-9

प्रकाशक
अनुज्ञा बुक्स
1/10206, लेन नं. 1E, वेस्ट गोरख पार्क, शाहदरा, दिल्ली-110 032
e-mail : anuugyabooks@gmail.com • salesanuugyabooks@gmail.com
फोन : 7291920186, 09350809192
www : anuugyabooks.com

आवरण
विश्वजीत महतो

मुद्रक
अर्पित प्रिंटोग्राफर्स, दिल्ली-32

JHARKHAND MEIN VIDROH KA ITIHAS
A book on Historical Socio-Political Revolutions of Tribes
by Shailendra Mahto

ब्रिटिशों के खिलाफ सन् 1767 से 1947 तक
झारखंड में जल-जंगल-जमीन और
भारत मुक्ति आंदोलन की
बलिवेदी पर प्राणों की आहुति देने वाले
शहीदों और संघर्ष करने वाले
उन तमाम वीरों को श्रद्धा-सुमन के साथ
यह पुस्तक समर्पित है।

शैलेन्द्र महतो का ऐतिहासिक पत्र – राज्य का नाम : झारखंड या वनांचल ?

नये राज्य का नामकरण झारखंड और वनांचल के बीच फंसा हुआ था। केन्द्रीय सरकार वनांचल के पक्ष में थी। ज्ञातव्य है कि तत्कालीन महामहिम राष्ट्रपति के० आर० नारायणन के निर्देश पर 'बिहार राज्य पुनर्गठन विधेयक – 2000' पर विचारार्थ बिहार विधान सभा की विशेष बैठक 24-25 अप्रैल 2000 को हुई थी, जिसमें शैलेन्द्र महतो के पत्र पर बिहार सरकार के विचारोपरान्त विधान सभा में झारखण्ड नाम को मान्यता मिली और केन्द्रीय सरकार ने भी स्वीकृति प्रदान की। दैनिक 'प्रभात खबर' (28 अप्रैल 2000) में प्रकाशित समाचार प्रस्तुत है –

नये राज्य के 'झारखंड' नामकरण के लिए शैलेंद्र महतो ने कई कारण बताये

संवाददाता

जमशेदपुर, 28 अप्रैल : भारतीय जनता पार्टी नेता तथा पूर्व सांसद शैलेंद्र महतो ने मुख्यमंत्री राबड़ी देवी को पत्र लिख कर नये राज्य का नाम 'वनांचल' नहीं 'झारखंड' हो, इसके कई कारण बताये थे, जिसके बाद ही राज्य सरकार ने 'झारखंड' शब्द को महत्व दिया और झारखंड अलग राज्य को मान्यता दी.

शैलेंद्र महतो ने पत्र में कहा था कि 'झारखंड' व 'वनांचल' दो नाम हैं. वनांचल इस क्षेत्र का राजनैतिक नाम है, जबकि 'झारखंड' इस क्षेत्र में शोषण मुक्त सामाजिक समानता, सरल प्रवृति, भौगोलिक संतुलन, धार्मिक ढांचा और ऐतिहासिक परंपरा है. सदियों से मौजूद है. इसकी ऐतिहासिक व धार्मिक पृष्ठभूमि है.

पत्र में इसके कारण बताते हुए कहा गया है कि बिहार सरकार द्वारा प्रकाशित पुस्तक बिहार में 1857 छोटानागपुर तथा संतालपरगनां लेखक - प्रणय चंद्र राय चौधरी ने लिखा है - श्री चैतन्य चरितामृत के सत्रहवें कंटों से हमें यह पता चलता है कि बंगाल में नदिया के परम भक्तराज तथा सुधारक श्री चैतन्य महाप्रभु 15वीं सदी के द्वितीय दशक में मथुरा जाते हुए झारखंड से गुजरे और आदिवासियों में धर्म परिवर्तन के कार्य किये. भविष्य पुराण के नवें परिच्छेद के सर्ग सात में भी झारखंड का उल्लेख हुआ है. शिव पुराण के आठवें परिच्छेद में झारखंड महादेव की चर्चा है. बंगला के सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रंथ कृतिवास रामायण में झारखंड का उल्लेख है- मांधार पृथ्वी आइलो झारखंड देशे, झारखंडी रा आछे अद्भुत रुपे. वृंदावन दास के ओड़िया चैतन्य भागवत के आदिखंड में कहा है- प्रथमें चोलीला, प्रभु तीर्थेश्वर, तबे वैद्यनाथ, झारखंड गेला एकेश्वर. मध्य कालीन मुगल साहित्य बाबरनामा के 'वकायते अलबंकावत' में झारखंड की चर्चा है. अकबरनामा में भी झारखंड का उल्लेख हुआ है.

पत्र में जानकारी दी गयी है कि विदेशी यात्रा वृतांत साहित्य अलबरूनी और कबीयर में झारखंड शब्द का प्रयोग हुआ है. इसी प्रकार अंगरेजों द्वारा नियुक्त इस क्षेत्र के सर्वेयर मैनुअल फ्रिकेंस ने भी अपने अभिलेख में इस क्षेत्र को झारखंड कहा है. पंडित गोपीनाथ कविराज ने भी अपने तंत्रशास्त्र में इस क्षेत्र को झारखंड माना है. बंगाल के वैदिक साहित्य के अध्येता राधा गोविंद बसाक ने अपनी पुस्तक भारतेर गुप्ततीर्थ में झारखंड के महादेव की महत्ता का बखान किया है. ग्यारहवीं शताब्दी में उपलब्ध बंगीय धर्म साहित्य में झारखंड का उल्लेख्य हुआ है. पाल वंशीय राजा के समकालीन राजकवियों ने अपने पदावली में इसको झारखंड कहा है. विल्सन ने भविष्य पुराण के ब्रह्मांड खंड के आधार पर वैद्यनाथ को झारखंड महादेव बताया है. मुगल साहित्य खुलासते तावारिख में झारखंड तीर्थ का उल्लेख है. पंडित मुकुल मिश्र 'द्विज' ने अपनी पुस्तक वैद्यनाथ मंगल में इस क्षेत्र के परम देवता के रूप में झारखंड महादेव के मंगल गीत गाये हैं. राजा मान सिंह, अकबर के सेनापति के रूप में इस क्षेत्र में आये, तो उनके सूबेदार सैयार खां ने राजकीय अभिलेख में इस वन प्रांतागार को झारखंड प्रदेश के नाम से संबोधित किया. पंडित नीलकंठ शास्त्री ने अपनी पुस्तक तीर्थ पुष्प में देवघर महादेव को झारखंड महादेव के नाम से विभूषित किया है. इसी प्रकार मनु संहिता के एक श्लोक 'अयः पात्रे पयः पानम्, शाल पत्रे च भोजनम्, शयनम् खर्जूरी पत्रे, झारखंडे विधियते.

उपरोक्त ऐतिहासिक तथ्यों से यह साबित होता है कि सदियों से झारखंड क्षेत्र का अस्तित्व बरकार है. झारखंड अलग राज्य राज्य का आंदोलन होता आ रहा है. आज स्थिति यह है कि सभी राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय दलों की ओर से अलग राज्य की बातें अलापते रहते हैं, जिसका परिणाम यह है कि राष्ट्रीय जनतांत्रिक गंठबंधन की सरकार ने बिहार राज्य पुनर्गठन विधेयक को बिहार विधान सभा में विचार के लिए भेजा गया. पत्र में यह भी बताया गया है कि प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी व गृह मंत्री लालकृष्ण आडवाणी अपनी सभाओं में झारखंड नाम की सहमति जता चुके हैं. पत्र में कहा गया है कि झारखंड नाम सांस्कृतिक पहचान का नाम है.

अखबार बोलता है, वनांचल से झारखंड कैसे बना?

प्रस्तावना

भारत का इतिहास विद्रोहों से भरा पड़ा है। खासकर अँग्रेजों के शासन के दौरान देश में एक के बाद एक अनेक विद्रोह हुए। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के पहले भी विद्रोह हुए और आजादी की लड़ाई के दौरान भी। झारखंड क्षेत्र में अधिकांश विद्रोहों का नेतृत्व आदिवासियों ने किया। झारखंड वह क्षेत्र रहा है जहाँ के बहादुरों ने अँग्रेजों के आगे घुटने नहीं टेके, संघर्ष किया। आरम्भ के विद्रोहों का असली कारण जल, जंगल और जमीन को लेकर था। जंगल को साफ कर आदिवासियों ने उसे अपने रहने लायक बनाया था। इसे वे अपना मानते थे और जब अँग्रेज आये तो उन्होंने जमीन पर लगान लगाना आरम्भ कर दिया। इसके खिलाफ आदिवासियों ने विद्रोह किया, हथियार उठाये। देश में हुए विद्रोहों का जिक्र कई पुस्तकों में किया गया है, लेकिन झारखंड में हुए विद्रोहों पर एक जगह पूरी सामग्री कम पुस्तकों में है। वह भी विस्तार से नहीं। यह कमी खल रही थी। शैलेन्द्र महतो की पुस्तक 'झारखंड में विद्रोह का इतिहास' (1767-1947) इस कमी को पूरा करती है। शैलेन्द्र महतो झारखंड के आंदोलनकारी रहे हैं। बाद में सांसद बने। ये उन विरले आंदोलनकारियों में हैं जो आंदोलन के दौरान तीर के साथ-साथ कलम भी चलाते रहे हैं। लेखन का अनुभव और जज्बा भी है। भूमिपुत्र हैं, झारखंड की संस्कृति को बेहतर समझते हैं। इसलिए उनकी पुस्तक में हर विद्रोह का विस्तार से विवरण दिया गया है।

शैलेन्द्र महतो खुद एक दस्तावेज हैं। उनके पास दस्तावेजों का भंडार है। इस पुस्तक का महत्त्व इसलिए और भी बढ़ जाता है क्योंकि इसमें कुछ ऐसे विद्रोह के बारे में विस्तार से जानकारी दी गयी है, जो कहीं और विस्तार से उपलब्ध नहीं है। पुस्तक में 1767 से हुए विद्रोहों को शामिल किया गया है। कई ऐसे विद्रोह हुए जिसमें आदिवासियों के अलावा गैर-आदिवासियों ने भी बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था। इस पुस्तक में उन घटनाओं को भी प्रमुखता से जगह मिली है। खास कर 1857 के विद्रोह के प्रमुख नायकों (इनमें राजा अर्जुन सिंह, ठाकुर विश्वनाथ शाही, पांडेय गणपत राय, उमराँव सिंह टिकैत, शेख भिखारी शामिल हैं) के संघर्ष के बारे में विस्तार से चर्चा है। धालभूम विद्रोह, चुआड़ विद्रोह, चेरो विद्रोह, पहाड़िया विद्रोह, तमाड़ विद्रोह और कोल विद्रोह, भूमिज विद्रोह, संताल विद्रोह,

सरदारी लड़ाई के साथ-साथ बिरसा मुंडा के उलगुलान को शामिल किया गया है। इस पुस्तक से बाबा तिलका माँझी के संघर्ष की जानकारी मिलती है। शैलेन्द्र महतो ने तिलका माँझी, सिदो-कान्हू, रघुनाथ महतो, गंगानारायण सिंह, तेलंगा खड़िया और बिरसा मुंडा की बहादुरी का जीवंत चित्रण किया है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भी झारखंड के वीर योद्धाओं और शहीदों का विस्तृत वर्णन है। इस पुस्तक से पता चलता है कि झारखंड के इन नायकों ने कैसे अपनी वीरता के बल पर अँग्रेजों को परेशान किये रखा। ऐसे वीरों के संघर्ष की बदौलत ही देश आजाद हो सका।

मैं वर्षों से शैलेन्द्र महतो को जानता हूँ। जब झारखंड राज्य के लिए आंदोलन चल रहा था, उन दिनों भी वे छोटी-छोटी पुस्तकें निकालते थे, अखबारों में कॉलम लिखते थे। उन्होंने 'झारखंड की समरगाथा' नामक पुस्तक लिखी है जो झारखंड आंदोलन का प्रामाणिक दस्तावेज है। इस पुस्तक की प्रस्तावना राँची विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति, शिक्षाविद् एवं झारखंड मामलों के विशेषज्ञ डॉ. रामदयाल मुंडा ने लिखी है।

दरअसल झारखंड के नायकों को कोई भूल न सके, नयी पीढ़ी जान सके, इस अभियान में शैलेन्द्र महतो लगे रहते हैं। यह पुस्तक भी उसी प्रयास की एक कड़ी है। यह सच है कि समाज अपने नायकों को भूलता जा रहा है। युवा पीढ़ी को इस बात को समझने की जरूरत है कि आज वह जिस आजाद भारत में सांस ले रही है, उसकी नींव उनके पूर्वजों ने रखी थी। उन्हें याद करना, उन्हें सम्मान देना हर किसी का फर्ज है। सम्भव है शैलेन्द्र महतो या उन जैसे कुछ गिने-चुने लेखक अगर समाज के असली वीर नायकों को सामने नहीं लाते, तो एक बड़ा वर्ग उनके योगदान को समझ नहीं पाता। इसलिए शैलेन्द्र महतो ने इस पुस्तक को लिख कर एक बड़ा काम किया है। ऐसी पुस्तकों को झारखंड के सिलेबस में शामिल करना चाहिए ताकि छात्र अपने क्षेत्र के नायकों और उनके संघर्ष को जान सकें।

राँची-834001

अनुज कुमार सिन्हा
कार्यकारी सम्पादक : प्रभात खबर
झारखंड

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक **'झारखंड में विद्रोह का इतिहास'** सन् 1767 से लेकर 1947 तक अँग्रेजों के खिलाफ हुए संघर्षगाथा का वर्णन है। झारखंड में सैकड़ों साल से आदिवासी-मूलवासी (झारखंडी) समाज के लोग निवास करते आ रहे हैं। उनके सामाजिक, रस्म-रिवाज, भाषा, संस्कृति, साहित्य, कला, संगीत, धर्म, दर्शन और परम्परा से झारखंडी अस्मिता बनी है। उन्होंने ही इस जमीन को खेती लायक बनाया और गाँव बसाये।

ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी ने 12 अगस्त 1765 को सम्राट शाह आलम द्वितीय से बंगाल, बिहार, उड़ीसा की दीवानी प्राप्त की। यह अँग्रेजों की बहुत बड़ी सफलता थी। अँग्रेजों ने अपना शासन स्थापित करना शुरू किया। जमींदारनुमा कुछ शक्तिशाली ग्राम प्रधानों ने भी उनका स्वागत किया। इसी क्रम में अँग्रेजों द्वारा झारखंड के पारम्परिक जल-जंगल-जमीन जैसे साधनों पर कब्जा करने के लिए प्रयास ही नहीं, आघात हुए। सन् 1767 के मध्य मार्च में मेदनीपुर सैनिक छावनी से जॉन फर्गुसन ने एक फौजी दस्ता लेकर धालभूम राज (राजधानी घाटशिला) को अपने अधीन करने के लिए राज की सीमा पर पहुँचा तो राजा जगन्नाथ धवलदेव की प्रजाओं ने इसका जमकर प्रतिवाद किया था। धालभूम का प्रतिरोध सिर्फ वहीं तक सीमित नहीं रहा बल्कि दूसरे इलाकों में भी फैलता गया। जंगल-महाल के क्षेत्र में अँग्रेजों को पाँव पसारता देख सन् 1769 में रघुनाथ महतो ने उन्हें चुनौती दी और लड़ाई को जनसंघर्ष का रूप दिया। अँग्रेज समर्थक जमींदारों ने इस आंदोलन को चुआड़ विद्रोह की संज्ञा दी। उसी समकालीन जंगल-महाल जिले के कुइलापाल के जागीरदार सुबला सिंह, दामपाड़ा (घाटशिला प्रखंड) के सरदार जगन्नाथ पातर और धाधका (बराहभूम परगना) के सरदार श्याम गुंजन के नेतृत्व में आंदोलन जारी रहा। दूसरे चरण में दुर्जन सिंह, गोवर्धन धीकपति, रानी शिरोमणि आदि ने चुआड़ विद्रोह का नेतृत्व किया, जो 1805 तक चला। 1770-71 में चेरो विद्रोह, 1772 में पहाड़िया विद्रोह, 1784 में तिलका माँझी का विद्रोह। 1782-1821 तक तमाड़ विद्रोह, 1820 में कोल विद्रोह, 1831-32 में ग्रेट कोल विद्रोह, 1832-33 में गंगानारायण सिंह का भूमिज विद्रोह, 1854-56 में सिदो-कान्हू

का संताल विद्रोह, 1857 में सिपाही विद्रोह, 1860 में सरदारी लड़ाई, 1874 में खरवार विद्रोह, 1895 से 1900 तक बिरसा मुंडा का उलगुलान आदि कई संघर्ष होते रहे।

स्वाधीनता आंदोलन में भी झारखंड का योगदान काफी सराहनीय रहा। झारखंड के वीर सपूत लड़ते गये और शहीद होते रहे।

झारखंड क्षेत्र में जब ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी की सरकार शासक, शोषक और राजनीतिक विधाता के रूप में स्थापित हुई तब प्रतिक्रिया स्वरूप झारखंड के स्वाभिमानी योद्धाओं ने तुरन्त उसका प्रतिवाद किया, उनके विरुद्ध आंदोलन किये, जो ब्रिटिश शासन से मुक्ति के लिए जनक्रांति थी। झारखंड में अँग्रेजों के खिलाफ हर विद्रोह भारत मुक्ति संग्राम का ही रूप था। सन् 1857 का सिपाही विद्रोह झारखंड के विद्रोहों से उपजी राष्ट्रीय चेतना का परिणाम था। इसके पहले झारखंड में कई विद्रोह हो चुके थे। सन् 1885 में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना इसी का प्रतिफल था। संताल विद्रोह के बाद जमीन की सुरक्षा के लिए संतालपरगना सेटेलमेंट रेगुलेशन 1872 में बना जो आगे चलकर 1949 में संतालपरगना टेनेन्सी एक्ट का रूप लिया। बिरसा मुंडा के उलगुलान से छोटानागपुर टेनेन्सी एक्ट 1908 में लागू हुआ।

ज्ञातव्य है कि आदिवासियों का जीवन, दर्शन, धार्मिक अनुष्ठान, सामाजिक रीति-रिवाज, सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ सभी प्रकृति पर आधारित हैं। अतः जंगलों पर प्रत्यक्ष आधिपत्य का अँग्रेजी कुप्रयास मात्र भौतिक संसाधनों को छीनने का आर्थिक आघात ही नहीं था, अपितु झारखंड की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक निरन्तरता को विछिन्न करने का व्यापक षडयंत्र भी था। विद्रोह का उद्देश्य अपने जंगल, जमीन और अपनी संस्कृति, अपने सामाजिक ताने-बाने और आर्थिक सम्प्रभुता में बाहरी हस्तक्षेप का विरोध करना था।

झारखंड के विद्रोहों और क्रांतिकारी लड़ाइयों का सिंहावलोकन एवं विश्लेषण करने पर यह निष्कर्ष अनायास ही निकल आता है कि इतिहासकारों ने इनके साथ सौतेला व्यवहार किया। झारखंडी संघर्षों की स्थिति हमेशा क्षेत्रीय ही बनी रही। भारत के इतिहास में ब्रिटिश सत्ता से सबसे ज्यादा, निरन्तरता, अनवरतता के साथ लड़ाई झारखंड में ही लड़ी गयी। अँग्रेज यहाँ कभी भी निर्विरोध शासक के रूप में प्रति स्थापित नहीं हो पाये। यह विश्लेषण एवं शोध का विषय है कि वे कौन से कारण थे जिनके चलते ब्रिटिश साम्राज्य अपनी पूरी शक्ति, क्षमता एवं बौद्धिक कुशलता के बावजूद झारखंड पर कभी अपना पूर्ण आधिपत्य नहीं जमा पाया। आज के सन्दर्भ में आदिवासियों की जीवन-पद्धति को निकटता से देखने पर इसके

कारण स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। वे कारण हैं, झारखंड के लोगों को अपनी संस्कृति में अटूट निष्ठा, स्वाभिमान की भावना, पाश्चात्य अपसंस्कृति के प्रति घोर घृणा एवं तिरस्कार का भाव। अपनी भूमि, वनों, पर्वतों, नदियों के साथ पवित्र भक्ति का भाव एवं इनका ईश्वर तुल्य आदर एवं सम्मान करने का विलक्षण गुण। यही कारण थे कि झारखंड के लोगों ने किसी भी विदेशी आक्रमणकारी को, चाहे वह मुगल हों या अँग्रेज, अपने भू-भाग में आधिपत्य जमाने नहीं दिया।

पुस्तक में चेरो विद्रोह, पहाड़िया विद्रोह, घटवाल विद्रोह, तमाड़ विद्रोह के साथ-साथ 'स्वाधीनता आंदोलन में झारखंड' शामिल है। इसका उद्देश्य है कि आनेवाली पीढ़ी 'झारखंड में विद्रोह का इतिहास' और स्वाधीनता संग्राम को विस्तार से समझ सके। उन्हें पता चले कि शोषण के खिलाफ लड़ाई व जल, जंगल और जमीन की रक्षा के लिए यहाँ के लोगों ने कितनी कुर्बानियाँ दी हैं।

इतिहास एक ऐसा विषय है, जो दुनिया की जानकारी देता है, लेकिन अफसोस कि झारखंड में बड़े-बड़े आंदोलन होने के बावजूद उसे राष्ट्रीय, अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर स्थान नहीं मिला। मुझे भरोसा है कि यह पुस्तक उस कमी को पूरा करेगी। पुस्तक की प्रस्तावना लिखने के लिए चिरपरिचित प्रखर पत्रकार एवं लेखक श्री अनुज कुमार सिन्हा के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

धन्यवाद,

सोनारी, जमशेदपुर-831011
झारखंड

– **शैलेन्द्र महतो**

अनुक्रम

प्रस्तावना 5

भूमिका 7

1. धालभूम विद्रोह (1767 ई.) 13
2. चुआड़ विद्रोह 18
   - क्रांतिवीर रघुनाथ महतो (1769 ई. – 1778 ई. तक) 18

   चुआड़ विद्रोह का दूसरा चरण
   - दुर्जन सिंह 30
   - गोवर्धन धीकपति 31
   - रानी शिरोमणि 32
3. चेरो विद्रोह (1770-71 ई.) 35
4. पहाड़िया विद्रोह (1772 ई.) 36
5. घटवाल विद्रोह (1772 ई.) 38
6. तमाड़ विद्रोह (1782-1821 ई.) 40
7. तिलका माँझी (1784-85 ई.) 44
8. कहानी कोल्हान की 54
9. कोल विद्रोह (1820 ई.) 63
10. ग्रेट कोल विद्रोह (1831-32 ई.) 69
    - सिंगराई मानकी-बिंदराई मानकी-सुरगा मुंडा 70
    - विद्रोह की शपथ 72
    - काते और बिन्जी राय गिरफ्तार 75
    - महान बुधु भगत 76
    - बुली महतो कोल विद्रोह / भूमिज विद्रोह के अग्रणी नेता 79
    - वीर संग्रामी– पोटो हो 82
11. भूमिज विद्रोह (1832-33) 84
    - शहीद गंगानारायण सिंह 84

12. कहानी संतालपरगना की (1854-56 ई.) 89
- भाग-1 89
- भाग-2 95
- भाग-3 99
- भाग-4 103
- भाग-5 106

13. संताल विद्रोह (1854-56) 112
- सिदो-कान्हू जनक्रांति के अगुवा 112
- चानकु महतो की संताल विद्रोह में फाँसी (1856) 124

14. 1857 का सिपाही विद्रोह 127

झारखंड की भूमिका 127
- झारखंड की भूमिका : भाग-1 130
- झारखंड की भूमिका : भाग–2 134
- झारखंड की भूमिका : भाग–3 140
- झारखंड की भूमिका : भाग–4 143
- झारखंड की भूमिका : भाग–5 147
- झारखंड की भूमिका : भाग–6 153

15. 1857– सिपाही विद्रोह में झारखंड के महानायकों की संघर्ष गाथा 155
- राजा अर्जुन सिंह 157
- नीलाम्बर-पीताम्बर 164
- ठाकुर विश्वनाथ शाही 167
- पांडेय गणपत राय 169
- उमराँव सिंह 'टिकैत' 173
- शेख भिखारी 175
- तेलंगा खड़िया 178

16. साफाहोड़ और खरवार आंदोलन (1870-76) 181
- खरवार आंदोलन 181

17. सरदारी लड़ाई (1860) 184

18. बिरसा मुंडा और उलगुलान (1895-1900) 190

19. गया मुंडा का संघर्ष 209

20. टाना भगत आंदोलन (1914 ई.) 213

21. स्वाधीनता आंदोलन में झारखंड 217

सन्दर्भ पुस्तक 240

धालभूम विद्रोह
(1767 ई.)

ईस्ट इंडिया कम्पनी ने मुगल बादशाह शाह आलम द्वितीय से 12 अगस्त 1765 में बंगाल, बिहार, ओड़िशा का दीवानी अधिकार प्राप्त किया। इसके बाद धालभूम से ब्रिटिश लोगों का संबंध शुरू हुआ। धालभूम के राजा, जिसे मेदनीपुर के पुराने अभिलेखों में घाटशिला का राजा भी कहा जाता था, का शासन था। सन् 1766 ई. में मेदनीपुर जिला अँग्रेजों के अधीन हो गया। प्रारम्भ में उन्हें पहाड़ी क्षेत्रों के पश्चिमी भागों के जमींदारों को वश में करने तथा उनके लूटमार के कामों को रोकने में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। 1767 में इन जमींदारों के खिलाफ मेदनीपुर के रेजिडेंट ने जॉन फर्गुसन नामक अधिकारी को सिपाहियों की एक टुकड़ी के साथ भेजा। शीघ्र ही उसे मेदनीपुर के पश्चिम बांकुड़ा के छतना, सुपूर और अंबिकानगर तथा मानभूम, बराहभूम के जमींदारों को आत्मसमर्पण कराने में सफलता मिली।

धालभूम के राजा ने रास्ते रोककर अँग्रेजों के प्रतिरोध की तैयारी कर ली थी। मार्च के मध्य फर्गुसन ने जामबनी से घाटशिला के लिए कूच किया किन्तु तीर-धनुष, तलवार, फरसे-बरछे से लैश 2000 विद्रोहियों ने चाकुलिया के पूरब दिशा में स्थित बेंद गाँव के नजदीक घेराबन्दी कर उन्हें आगे बढ़ने से रोका। अँग्रेज सिपाहियों ने बिना कोई नुकसान पहुँचाये इन लोगों को जंगल में खदेड़ दिया। दूसरे दिन फिर विद्रोहियों ने दुबारा आक्रमण किया किन्तु सिपाहियों की गोलियों से उन्हें दूर भगा दिया। इसके बाद राजा के लोग वैसे तो छोटी ब्रिटिश फौज के सामने टिक न सके, किन्तु उनके आसपास रहकर आक्रामक बने रहे। फर्गुसन को आगे बढ़ने के क्रम में और 32 मील की दूरी तय करनी पड़ी।

फर्गुसन 22 मार्च 1767 को नरसिंहगढ़ किले के बारे में जानकारी लेने पहुँचा। इसके बाद फर्गुसन ने एक टुकड़ी आगे घाटशिला भेजी जो राजा बैकुण्ठ धवलदेव को पकड़ने में कामयाब रही और उसे कैद कर मेदनीपुर जेल भेज दिया गया तथा उसके भतीजे जगन्नाथ धवलदेव को सालाना 5000/- रु. कर (Tax) देने की शर्त पर उसकी जगह राजा बनाया गया। फिर फर्गुसन ने बलरामपुर की ओर कूच किया। अगस्त 1767 में फर्गुसन ने वापस लौटने पर नये राजा जगन्नाथ